Reg No 177/2008-2009 ISSN: 2322–0317

PSSH PERSPECTIVE of SOCIAL SCIENCES and HUMANITIES

An International Multidisciplinary Refereed Research Journal

VOL 2, NO 2

JULY - DECEMBER 201

Biannual

Editor

Dr Hemant Kumar Singh

Assistant Professor

Economics Department

Madan Mohan Malviya PG College

Deoria (UP)

Publisher

Herambh Welfare Society

Varanasi (India)

ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में क्षेत्रीय ग्रामीण बैकों का योगदान - एक अध्ययन

डॉ० शैलेन्द्र कुमार उपाध्याय[1]

बैकों के राष्ट्रीयकरण के पश्चात बैकिंग व्यवस्था में महत्वपूर्ण मात्रात्मक और गुणात्मक और परिवर्तन हुए। इन व्यापक परिवर्तनों के कारण एक वर्ग विशेष को बैकिंग–सुविधाएँ उपलब्ध कराने की परम्परा से हटकर जन–सामान्य को इन सुविधाओं से लाभान्वित करने का सार्थक प्रयास बैकों के द्वारा प्रारम्भ हुआ। ग्रामीण वित्त के क्षेत्र में व्यापारिक बैकों एवं सहकारी साख–संस्थाओं के अथक प्रयासों के बावजूद ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय साख की संस्थागत संस्थाए या तो नगण्य थी या उनकी संख्या अपर्याप्त थी। कृषकों को परम्परागत ऋण व्यवस्था से छुटकारा दिलाने की दृष्टि से सरकार द्वारा सन् 1972 में आर.जी. सरैया की अध्यक्षता में एक बैकिंग आयोग का गठन किया गया।[1] इस आयोग ने व्यापारिक बैकों की शाखाओं के विस्तार के साथ–साथ क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की स्थापना का सुझाव दिया ताकि लघु एवं सीमान्त कृषकों, ग्रामीण कारीगरों एवं फुटकर व्यापारियों आदि की ऋण समस्याओं का समाधान किया जा सकें।

सन् 1991 के पश्चात् भारतीय अर्थव्यवस्था के सभी आयामों जैसे आर्थिक, वित्तीय, व्यापार, उद्योग इत्यादि में महत्वपूर्ण बदलाव हुए और बैंकिंग क्षेत्र भी इस बदलाव की आंधी से अछूता नहीं रहा। नरसिंहम् समिति की पहली रिपोर्ट (1991) 'वित्तीय क्षेत्र के सुधार'[2] और नरसिंहम् समिति की दूसरी रिपोर्ट (1998) 'बैंकिंग क्षेत्र के सुधार'[3] ने भारतीय वित्तीय और बैंकिंग प्रणाली को प्रभावित किया। इन रिपोर्टों के आलोक में निर्देशित साख–नीति में संशोधन और आस्ति–वर्गीकरण, आय–निर्धारण, पूंजी पर्याप्तता, प्रकटीकरण आदि के सख्त मानक बने हैं। इन मानकों का प्रयास रहा है कि बैंकों का पुनः पूंजीकरण किया जाए, ऋणों तथा अग्रिमों की गुणवत्ता बढ़ाई जाए, बैंकिंग प्रणाली में प्रतियोगिता और प्रौद्योगिकी को बढ़ावा दिया जाय। इस प्रकार संस्थागत संरचना को मजबूती देने का साहसिक प्रयास हुआ। साथ ही, जोखिम प्रबन्ध के सभी आयाम जैसे पहचान, मात्रा निर्धारण और शमन उद्वेलित हुए।

[1] वरिष्ठ प्रवक्ता, वाणिज्य विभाग, टी0डी0पी0जी0 कालेज, जौनपुर

आज तेजी से बदलते सामाजिक – आर्थिक परिदृश्य और उभरती हुई आवश्यकताओं के कारण प्राथमिकताओं का पुनर्निर्धारण आवश्यक हो गया है। इस लेख में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, जो भारतीय बैंकिंग प्रणाली का एक अभिन्न अंग है, के विकास का लेखा–जोखा प्रस्तुत करने का एक सरल प्रयास किया गया है। साथ ही, यह कोशिश भी की गई है कि आशाओं और आशंकाओं के वर्तमान दौर में सामयिक रणनीति हेतु क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की उपलब्धियों, विसंगतियों और समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाए, जिससे भावी विकास की सम्भावनाओं की तलाश हो सकें।

ग्रामीण बैंक की वित्तीय स्थिति

यहां पर यह स्पष्ट कर देना उचित होगा कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के देशव्यापी आँकड़ों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष नहीं निकाला जाना चाहिए कि क्षेत्रवार, प्रायोजक बैंक–वार, राज्य–वार, व्यवसाय–वार आदि रूपों में इन बैंकों में भिन्नता नहीं है। ऐसा नहीं है, कदापि नहीं। लेकिन हमारी मान्यता है कि इन देशव्यापी आंकड़ों के विश्लेषण से चुनिंदा तात्कालिक कारवाई करने वाले चिन्तन बिन्दु निकल सकते हैं, क्योंकि इन सभी बैंकों की मूलभूत समस्याएँ, बुनियादी परिवेश समान हैं। इन विश्लेषणात्मक बिन्दुओं के आधार पर नीति–निर्धारण को एक नई दिश दी जा सकती है। इस विचारधारा को मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों से भी बल मिलता है।

2 अक्टूबर, 1975 को क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की शुरूआत हुई। इस प्रारम्भिक शुरूआत से 31 मार्च, 2000 की स्थिति के अनुसार 484 जिलों में 14517 शाखाओं के साथ कुल 196 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक कार्यरत हैं। शाखाओं के नेटवर्क में 11 महानगरीय, 348 शहरी, 1925 अर्द्धशहरी तथा 12233 ग्रामीण शाखाएँ सम्मिलित हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का ग्रामीण शाखा नेटवर्क, समस्त अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के कुल ग्रामीण शाखा नेटवर्क का 37 प्रतिशत है। हमारी न्यायोचित मान्यता है कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की समस्याओं से परिचित होने के लिए उनकी विकासोन्मुखी भूमिका पर भी एक विहंगम दृष्टि डालना समीचीन होगा। अनेकानेक शोध अध्ययनों और गहन सामाजिक–आर्थिक विश्लेषणों ने यह स्थापित किया है कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की सामाजिक प्रतिबद्धताओं ने ग्रामीण बेराजगारी, शहरों की ओर पलायन, जमीनी स्तर पर तकनीकी जानकारी की सापेक्षिक अनुपलब्धता और प्रच्छन्न ग्रामीण संसाधनों का अपेक्षा से कम उपयोग संबंधी विषम समस्याओं के निराकरण का आंशिक रूप से ही सफल प्रयास किया है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के कार्य–निष्पादन की समीक्षा से यह स्पष्ट है कि लाभप्रदता के तकरीबन सभी मानदण्डों के अनुसार इन बैंकों की कार्य–पद्धति और वित्तीय–स्थिति में उत्तरोत्तर सुधार हो रहा है। इस विचारधारा की पुष्टि निम्न महत्वपूर्ण कारकों से की जा सकती है :–

वर्ष 1998–99 के 147 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की तुलना में वर्ष 1999–2000 में 162 बैंकों ने लाभ अर्जित किया। 158 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने अपनी कार्य–निष्पादकता में सुधार किया। इन बैंकों ने अपने लाभ में बढ़ोतरी की है। हानि में कमी की है। हानि की स्थिति से उबर कर लाभ अर्जित करने लगे हैं। 17 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक घाटे से लाभ में आ गए हैं। वर्ष 1999–2000

में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का सकल संचित घाटा 2978.9 करोड़ रूपए था। इसी प्रकार सभी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का शुद्ध लाभ वर्ष 1999–2000 में 430 करोड़ रूपए हो गया। 31 मार्च, 1999 में 147 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के 419. 69 करोड़ रूपए के शुद्ध लाभ के स्थान पर वर्ष 1999–2000 में 162 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने 543.52 करोड़ रूपए का संयुक्त शुद्ध लाभ कमाया। अतः, स्पष्ट है कि लाभप्रदता के क्षेत्र में उल्लेखनीय सफलता के बावजूद क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का सम्पूर्ण वातावरण भारी ऊहापोह, सम्भावनाओं और चुनौतियों से भरा है।

व्यवसाय की लागत

वर्ष 1999–2000 में कुल जमा राशियाँ 19 प्रतिशत से बढ़कर 32,204 करोड़ रूपए हो गई, लेकिन इसमें मीयादी जमा में सर्वाधिक वृद्धि हुई, जो सबसे कीमती जमाराशि है। इसी वर्ष कुल बकाया अग्रिम 16 प्रतिशत की दर से बढ़कर 13,184 करोड़ रूपए और कुल उधार राशि 3 प्रतिशत की दर से बढ़कर 3,757 करोड़ रूपए हो गई। वसूली के क्षेत्र में भी इन संस्थाओं को किंकर्तव्यविमूढ़ नहीं कहा जा सकता, क्योंकि 30 जून, 1999 को मांग की तुलना में वसूली 64 प्रतिशत रही। यह तथ्य गौरतलब है कि गैर–निष्पादक आस्तियाँ जो 31 मार्च, 2000 को घटकर 20 प्रतिशत रह गई। इस समस्या से निजात पाने के लिए यह जरूरी है कि गैर–निष्पादक आस्तियों की वसूली के जी–तोड़ प्रयास के साथ–साथ खातों के श्रेणी अवनयन रोकने के यथेष्ट प्रयास किए जाएँ।

भारतीय रिज़र्व बैंक और राष्ट्रीय कृषि तथा ग्रामीण विकास बैंक के दिशा–निर्देशों के अनुरूप लेन–देन की लागत (transaction cost) कुल आय का 30 प्रतिशत से अधिक और कार्यशील पूंजी का 2 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। इस क्षेत्र में कुछ सफलता के बावजूद वर्ष 1999–2000 में लेन–देन की लागत कार्यशील पूंजी का 2.8 प्रतिशत थी। इसका सीधा–सपाट निष्कर्ष यही निकलता है कि इस पहलू पर अभी और अंकुश लगाना नितान्त आवश्यक है।

ग्रामीण बैंकिंग और वित्तीय क्षेत्र में सुधार

ग्रामीण क्षेत्र के विकास के लिए ऋण व्यवस्था में बदलाव लाने में नरसिंहम समिति ने मुख्य भूमिका निभाई। ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए ऋण प्रदान करने में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। किन्तु क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की माली हालत खराब होती जा रही थी। ऐसे में उनको फिर से सही स्थिति में लाने के लिए 1991 में नरसिंहम समिति ने कई सिफारिशें कीं, जिनमें से मुख्य इस प्रकार हैं–

1. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को सभी प्रकार की गतिविधियों में शामिल किया जाए, लेकिन उनकी मुख्य भूमिका ग्रामीण क्षेत्र के विकास में होनी चाहिए।

2. ऐसी व्यवस्था की जाए कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अपनी अधिशेष राशि राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक के पास या फिर इसी तरह की किसी अन्य संस्था के पास रख सकें, जिससे उनको अच्छी आय हो।
3. वाणिज्य–बैंक अपनी सहायक संस्था के रूप में ग्रामीण बैंक की स्थापना करें।
4. मौजूदा ग्रामीण बैंकों और उने प्रायोजक वाणिज्य–बैंकों को यह विकल्प दिया जाए कि ग्रामीण बैंक या तो अपना अलग अस्तित्व बनाए रखें या फिर वाणिज्य–बैंक की सहायक संस्था के साथ विलय कर लें।

इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखते हुए नाबार्ड/भारतीय रिजर्व बैंक ने ग्रामीण बैंकों की माली हालत को मजबूत करने के लिए कई तरह के सुझाव दिए। ग्रामीण बैंकों के उत्थान के लिए भारतीय रिजर्व बैंक और नाबार्ड ने 1992–93 में निम्नलिखित नीतिगत उपाय शुरू किए।

1. ग्रामीण बैंकों को जनवरी, 1994 में अनुमति प्रदान की गई कि वे अपने नए अग्रिम में से 60% भाग लक्ष्येतर समूह के लाभार्थियों को उधार दें। सितम्बर, 1992 में यह सीमा 40% थी।
2. नए अग्रिम के उक्त 60% में से 10% भाग गैर–उत्पादक क्षेत्र को ऋण देने के लिए इस्तेमाल करने की भी अनुमति दी गई।
3. स्वर्ण ऋण पर उच्चतम सीमा प्रति उधारकर्ता 10,000 रूपये से बढ़ाकर 25,000 रूपये कर दी गई।
4. ग्रामीण बैंकों को 100% नकद मार्जिन के प्रति अपने ग्राहकों को गारंटी जारी करने की अनुमति दी गई। इसके लिए कोई सीमा नहीं रखी गई।
5. चेक/ड्राफ्ट की खरीद/भुनाई की सीमा प्रति ग्राहक 10,000 रूपये से बढ़ाकर 25,000 रूपये कर दी गई। यह सीमा प्रति शाखा 25,000 रूपये से बढ़ाकर, 1,00,000 रूपये कर दी गई।
6. ग्रामीण बैंकों को अपने प्रायोजक वाणिज्य–बैंकों के अभिकर्ता (एजेन्ट) के रूप में रूपया यात्री चेक जारी करने की अनुमति दी गई।
7. ग्रामीण बैंकों को अपने प्रायोजक वाणिज्य–बैंकों के अभिकर्ता के रूप में ड्राफ्ट/एमटी जारी करने की भी अनुमति दी गई।
8. ग्रामीण बैंकों को सेफ डिपाजिट लॉकर रखने की भी अनुमति दी गई।

उपरोक्त तथ्यात्मक आकलन यह स्पष्ट करता है कि भारत सरकार, भारतीय रिज़र्व बैंक और राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक द्वारा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के पुनर्गठन एवं सुदृढ़ीकरण हेतु उठाए गए विभिन्न ठोस और दूरगामी कदमों के सकारात्मक परिणाम हुए हैं। निःसंदेह इस कार्य में प्रायोजक

बैंकों की भूमिका भी सराहनीय रही है। लेकिन आज आर्थिक सुधारों के द्वितीय चरण में इन संस्थाओं का मात्र समाजशास्त्रीय और विकासपरक दृष्टिकोणों पर खरा उतरना ही काफी नहीं है, अपितु इन संस्थाओं को आन्तरिक तौर पर मजबूत होना होगा। अतः, यह कहा जा सकता है कि इन बैंकों ने अपनी कठिन विकास–यात्रा का एक मोड़ ही पार किया है, मंजिल नहीं। वस्तुतः इन बैंकों की मंजिल तो एक स्वस्थ, विकासक्षम और लाभप्रद संस्था के रूप में कार्य करना है। ताकि ग्रामीण बैंक आज की चुनौतियों और भविष्य की अपेक्षाओं को पूरा करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दें सकें।

संदर्भ

1. रिर्पोट आन करेन्सी एण्ड फायनान्स Vol. I1973, मुम्बई
2. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक के संबन्ध में नरसिंहम कमेटी की रिपोर्ट प्रथम सन् 1991 (आर0बी0आई0 मुम्बई)।
3. बैंकिंग क्षेत्र में सुधार के सम्बध में नरसिंहम कमेटी की रिपोर्ट द्वितीय सन् 1998
4. इक्नामिक सर्वे के विभिन्न वर्षों के प्रतिवेदन।